Research Paper E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 3 | ISSUE : 8 | AUG 2017

कौटिल्य के अनुसार जीवन में अर्थ का महत्त्व

डॉ॰ कमलाकान्त सिंह [1]

[1] प्राचार्य, इतिहास विभाग, शिवपूजन शास्त्री समता महाविद्यालय, दिनारा (रोहतास), वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा (बिहार)

ABSTRACT

Keywords:

सम्पूर्ण संसार में मानव को मननशील होने के कारण चौरासी लाख जीव–जन्तुओं में सर्वश्रेष्ठ माना गया है। सृष्टि के विकास के साथ ही साथ मानव ने भी अपने चिन्तनयुक्त स्वभाव से अपने जीवन को उन्नत और सुखमय बनाने के लिए मनन किया। उस मनन का ही फल था कि उस मानव ने उद्योग के बल पर बहुत बड़े–बड़े कार्य किये और जीवनयापन करने का मार्ग खोज निकाला। जीवन के लिए कुछ नितांत आवश्यक सामग्रियों को खोजा। उन सामग्रियों में कृषि मुख्य और आवश्यक प्रमाणित हुई। कृषि की अभिवृद्धि के लिए साधनों को खोजा गया तो सबसे पहले 'पशु' इसके योग्य प्राप्त हुआ। पशु ने कृषि की कर्षण करने के कारण कृषि के योग्य बनाया और अधिक उत्पादन के लिए खाद देकर सुस्वादिष्ट अन्न उत्पन्न किया। अब कृषि और पशु अर्थ के रूप में सम्मान पाने लगे। मानव के जीवन में अर्थ का इसी प्रकार महत्त्व बढ़ने लगा। जीवनोपयोगी वस्तुओं को मनुष्य अर्थ के बिना कैसे प्राप्त कर सकता है? संसार में सर्वप्रथम चाहे सिक्कों का प्रयोग न रहा हो किन्तु व्यापार और जीवनोपयोगी खाद्य सामग्री वस्तु विनिमय के द्वारा प्राप्त की जाती थीं। जिसके पास पशु, कृषि एवं कृषि से उत्पादित सामग्री रहती वही व्यक्ति अर्थवान् समझा जाता था। इस प्रकार आर्थिक विकास के साथ ही साथ अर्थ का महत्व बढ़ता गया और अर्थ जीवन को सुखमय बनाने एवं जीवनयापन के लिए आवश्यक होता गया।[1]

वस्तुतः मानवीय जीवन में अर्थ का अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है। अर्थ एक प्रकार से जीवन सार–सा हो गया। अर्थहीन व्यक्ति अपनी किसी प्रकार की भी कामना की पूर्ति नहीं कर सकता है। अर्थ के बिना मानव का जीवन नगण्य माना गया है। अर्थवान् अर्थ के बल पर ही धर्म, काम और मोक्ष को भी प्राप्त कर लेता है। अर्थ को चारों पदार्थों का मूल कारण माना गया है। अर्थशास्त्र में अर्थ के अनेक नाम है और अनेक साधनों के द्वारा जीवन–यात्रा सुखपूर्वक व्यतीत करने के लिए अर्थ संग्रह किया जाता है। केवल अर्थसंग्रह करने मात्र से ही कार्य की सिद्धि नहीं हो सकती है, अपितु उसकी सुरक्षा और वृद्धि के साधनों पर संग्रह करने से भी अधिक ध्यान दिया गया है। यदि अर्थ व्यर्थ और पृथ्वी में दबी हुई सम्पदा के समान होता। इस प्रकार की सम्पदा से न व्यक्ति को ही लाभ है न समाज को ही लाभ है और न राष्ट्र का ही हित है। ऐसा अर्थ किस काम का? यद्यपि पृथ्वी को ही अर्थगर्भा कहा गया है किन्तु बिना अर्थशास्त्र की व्यवस्था के पृथ्वी कभी अर्थ दे सकती है? नहीं। उपभोग के सिद्धान्त के अनुसार ही मनुष्य उत्पादन वृद्धि की ओर अग्रसरित होता है।

आचार्य कौटिल्य ने अपने 'कौटिल्य अर्थशास्त्र' में अर्थ और अर्थशास्त्र के विषय में 'पृथ्वी' को सबसे उपादेय प्रमाणित किया है। वस्तुतः उपभोग और उपयोग ने ही उत्पादन के माध्यम से 'उद्योग' को जन्म दिया हे। इसलिए प्राचीन, पाश्चात्य और आधुनिक अर्थशास्त्रियों ने 'पृथ्वी और उद्योग' को अर्थ प्राप्ति का मूल उद्गम कहा है। जिससे जगत का व्यवहार चलता है या जिससे मनुष्यों की आजीविका चलती है उसे ही वास्तव में 'अर्थ' कहा जाता है।

अर्थव्यवस्थापक 'मनु' ने जीविका को चार प्रकार का माना है। 1. ऋत, 2. अमृत, 3. मृत, 4. प्रमृत।

1. किसानों के खेतों में फसल काटने के पश्चात् छूटे हुए अन्न को पाना ऋण कहलाता है।

2. बिना माँगे जो मिल जाये उसे 'अमृत' कहते हैं।

3. भिक्षा माँग कर जो मिलता है उसे 'मृत' कहते हैं।

4. कृषि से उत्पन्न होने वाले अर्थ को 'प्रमृत' कहा गया है।

जिस आजीविका को करने में सम्मान और सत्य बना रहे वही वृत्ति सर्वोत्तम मानी गई है। जीवन रक्षा के लिए मनुष्य को कुछ न कुछ कार्य करना ही पड़ता है किन्तु उस जीविका से क्या लाभ जिसमें मनुष्य को सुख और प्रसन्नता न मिल सके। दूसरों का अहित करने या दूसरों का कष्ट पहुँचा कर यदि अपनी आजीविका चलाई तो क्या लाभ। निन्दनीय कार्यों से वृत्ति चलाना गर्हित माना गया है। जैसे– ''वाणिज्य को झूठ सच बोलने के कारण सत्यानृत कहा गया है, उस जीविका से भी जीवन–निवाह किया जाता है। सेवावृत्ति को श्ववृत्ति (श्वान–कुत्ते की वृत्ति) माना गया है। अतः उस वृत्ति का परित्याग कर देना चाहिए।''[2]

मनुष्य को वृत्ति अर्थात् आजीविका के लिए कभी भी लोक के विरुद्ध कार्यों को नहीं अपनाना चाहिए। ऐसा करने से अन्य सामाजिकों पर भी बुरा प्रभाव पड़ेगा और सामाजिक नियमों का उलंघन होगा। व्यवस्था मं इस प्रकार की बाधा आते हो आर्थिक विकास रुक जायेगा और लोग सही मार्गों को छोड़कर बुरे मार्गों की ओर प्रवृत होंगे। अतः प्राचीन भारतीय अर्थ व्यवस्थापक मनु ने अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये हैं–

''जीविका के लिए समाज विरुद्ध कार्यों का कभी भी आश्रय ग्रहण न करे।''

भारतीय दृष्टिकोण ने व्यक्ति, समाज और राष्ट्र की कल्याणकारी भावनाओं का ध्यान रखते हुए धर्म अर्थात् अच्छे नियमों का परिपालन करने के लिए अर्थ को आध्यात्मिक दृष्टिकोण से चारों पदार्थों में द्वितीय स्थान दिया है जिससे व्यक्ति, समाज, राष्ट्र सामाजिक नियमों का उलंघन न कर सके। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में एक नैतिकता का भी ध्यान रखा गया है। अच्छे नियमों का पालन करते हुए लोग दूसरों के अर्थ को भूल कर भी अपहरण न करें। आर्थिक योजनाओं को क्रियान्वित करने में, उसमें कार्य करने वालों का किसी प्रकार का भी भय न हो और वे कर्त्तव्यनिष्ठ एवं निश्चिन्त हाकर अपने लाभ, समाज के हित और राष्ट्र के कल्याण एवं अभ्युदय के लिए अधिक से अधिक कार्य करेंगे। प्राचीन भारतीय दृष्टिकोण इसलिए अर्थ के विषय में सर्वप्रिय, ग्रहण करने योग्य, सर्व जन कल्याणकारी और आर्थिक विकास के लिये आदर्श सिद्ध हुआ। प्राचोन भारतीय सभी आर्थिक विचारों ने एक मत हाकर एक ही क्रम से और एक ही विचारधारा से इस पद्धति को अपनाया है। इस चतुर्वर्ग क सिद्धान्तों में प्राचीन आर्थिक विचारकों में कहीं भी तनिक मतभेद नहीं दिखाई देता। इसका मुख्य कारण दृष्टिकोण की गम्भीरता वास्तविकता और दूरदर्शिता थी। सभी का उद्देश्य एक ही था, जीवन को सुखमय, सम्पन्न, समुन्नत और परमपद मोक्ष प्राप्त कराना था।

आर्थिक विकास, अर्थप्राप्ति और आर्थिक योजनाओं को सफल बनाने में अच्छे शासक का बहुत बड़ा हाथ रहा है। इसलिए प्रत्येक प्राचीन भारतीय आर्थिक विचारक न आर्थिक विवेचन करने से पूर्व शासक–राजा को अपनी रचनाओं में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान दिया है। उसे शासक का सर्वोच्च पद देकर सम्मानित किया और उसे जनता के लिये आदर्श मानकर सच्चरित्र, विद्वान्, बुद्धिमान् और व्यवहार कुशल होना आवश्यक माना है।

अति प्राचीन समय से हो अराजकता की स्थिति में संसार के किसी भी राष्ट्र ने उन्नति नहीं की है। सुख से जीवनयापन करने के लिए किसी शक्ति सम्पन्न शासक की आवश्यकता प्रतीत हुई। सुशासक के होने से शासन सुव्यवस्थित रूप से चलने लगा। समस्त प्रजावर्ग की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उद्योग धन्धो को अपनाया जाने लगा और जगत व्यवहार और जीवन को सुखमय बनाने के लिए 'अर्थ' को महत्व मिला।

जिस अर्थ को जीवनयापन के लिए इतना आवश्यक माना गया है, अन्ततोगत्वा वह अर्थ कैसे और कहाँ से प्राप्त होगा? प्रथम शासक और अर्थव्यवस्थापक मनु ने समाज में अर्थव्यवस्था स्थापित करने के लिए मानवीय सिद्धान्तों पर अर्थ संग्रह करने की व्यवस्था बताई है। निन्दनीय और समाज विरोधी कार्यों से अर्थ उपार्जन करना अत्यधिक बुरा एवं शोषणयुक्त माना है। अतः इन उपायों द्वारा व्यक्ति को अर्थ का संचय करना चाहिए।

''अपने जीवन को यापन करने के लिए अनिन्दनीय कार्यों और शरीर को व्यथा न देकर अर्थ संचय करना चाहिये।''[3]

प्राचीन भारतीय अर्थव्यवस्थापक मनु ने जहाँ जीवन में अर्थ का अत्यधिक महत्व माना है। वहाँ दूसरी ओर बुरे उपायों और मार्गों द्वारा अर्थ उपार्जन को अत्यधिक बुरा भी माना है। अपने अच्छे कामों द्वारा मनुष्य को सामाजिक व्यवस्था को सुरक्षित रखने के लिए अर्थ प्राप्त करने पर बल दिया है। प्रायः यह भी देखा गया है कि बुरे मार्गों से अर्थ एकत्र करने में व्यक्ति अपने शरीर को अधिक कष्ट देता है और समाज के भय से परेशान रहता है एवं उपार्जित अर्थ का सुखपूर्वक उपभोग भी नहीं कर सकता है, कारण क्योंकि उसके उपार्जन के मार्ग समाजोचित नहीं हैं। अतः मनु ने निन्दनीय और शरीर को कष्ट देने वाले उपायों से अर्थ उपार्जन का बहुत बुरा माना है।

भिक्षा माँग कर या चोरी करके कोई भी व्यक्ति, समाज अथवा राष्ट्र अपनी आर्थिक उन्नति नहीं कर सकता है। जीवन में मनु ने उद्योग के द्वारा जीवन निर्वाह करनेवाली वृत्ति को ही समाज में मान्यता देकर सम्मानित स्थान दिया है। कुत्ते की वृत्ति, दुष्ट चेष्टाओं द्वारा अर्थ प्राप्त करना निन्दनीय माना है। उद्योगी व्यक्ति अपने उद्योग के बल पर ही उन्नति करता हुआ समाज में सम्मान पाता है और दूसरों को सही मार्ग दिखाता है। दूसरों पर आश्रित रहकर अधिक दिन तक सुख से जीवित नहीं रह सकता है।

प्राचीन भारतीय अर्थव्यवस्थापक मनु ने शासक को अर्थ के विषय में इस प्रकार के निर्देश दिये हैं जिससे राष्ट्र को आर्थिक संकट का सामना न करना पड़े और अर्थ के अधिक होने पर उसका समाज के अच्छे लोगों में वितरण कर देना चाहिये। जैसा कि मनु का विचार है कि–

''अप्राप्य अर्थ का प्राप्त करने का प्रयत्न करे, प्राप्त अर्थ की यत्नपूर्वक रक्षा करे, रक्षित अर्थ की वृद्धि के लिए यत्न करे और अधिक वृद्धि से प्राप्त हुए अर्थ को सत्प्रात्रों में वितरण कर दे।''[4]

इस प्रकार के अर्थ संग्रह करने से प्रजा में सही वितरण, उचित संग्रह और वास्तविक रूप से अर्थ की वृद्धि होती है। जनता का इस प्रकार की अर्थनीति में शोषण, प्रपीड़न की भावनाएँ नहीं दिखती और इसके विरुद्ध किसी को कुछ कहने का अवसर नहीं मिलता। अपितु अच्छे लोगों को इससे प्रोत्साहन मिलता है और लोगों में उचित रीति से अर्थ का वितरण होता है जिससे प्राप्तकर्त्ता उसका सही उपभोग करता है।

अर्थ प्राप्ति का अच्छे शासक को इस प्रकार चिन्तन करना चाहिए। अर्थ प्राप्त करने वाले व्यक्ति, समाज, शासक और राष्ट्र को अर्थ प्राप्ति के लिए एकाग्रता, शांत चित्त और पूर्ण स्वहित को छोड़कर उद्योग करना होगा। बिना उद्योग के संसार में कोई भी कार्य कैसे सफल हो सकता है? प्रत्येक कार्य की अपनी–अपनी प्रक्रियायें होती हैं। उनका समय और स्थिति के अनुसार परिपालन करने से ही कार्य की सिद्धि होगी। वह अर्थ प्राप्ति के साधन कैसे सिद्ध किये जायें? उसके अर्थ चिन्तन पर अर्थव्यवस्थापक मनु ने अपने विचार इस प्रकार व्यक्त करते हुये अर्थ प्राप्त करने के उपाय बताये हैं–

''बगुले के समान अर्थ प्राप्ति का चिन्तन करे, शेर के समान पराक्रम करे, भेड़ियों के समान शत्रुओं का संहार करे और रखगोर के समान बुद्धिमत्ता से संकटों से पार हो जाये।''

अर्थ संग्रह करने वाले शासक को चारो पदार्थों का (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) पूर्ण ज्ञान और उपयोग आना चाहिये। जिससे सही आचरण, सही चिन्तन और सही पद्धति पर कार्य होगा। प्राचीन भारतीय अर्थशास्त्रियों के जीवन का मुख्य उद्देश्य चारों पदार्थों को प्राप्त करना माना है। धर्म और मोक्ष का सम्बन्ध समाज एवं राष्ट्र के कल्याणार्थ है। अर्थ और काम का सम्बन्ध मनुष्य के सांसारिक व्यवहार को चलाने एवं अपनी समस्त प्रकार की इच्छाओं की पूर्ति हेतु होता है। इन सभी का उपयोग और उपभोग करने के पश्चात् ही मनुष्य मोक्ष प्राप्ति चतुर्थ पदार्थ प्राप्ति की ओर प्रवृत्त होता है। प्राचीन भारतीय अर्थशास्त्री मनु ने राजा को चारो पदार्थों का ज्ञाता और उन्हीं के अनुसार कार्य करने का निर्देश दिया है–

''अच्छे शासक को चार प्रकार के पुरुषार्थों का प्रयोजन जानना चाहिये एवं प्रमादरहित नित्य इनका परिपालन करना चाहिये।''

इन चारों पदार्थों का सही रूप से चिन्तन करने वाला व्यक्ति कभी भी बुरे मार्गों, निन्दनीय कार्यों और दूसरों को कष्ट देकर अर्थ प्राप्त नहीं करेगा। इसलिए हमारे अर्थशास्त्री मनु ने चारों पदार्थों को जगत के व्यवहार में उचित स्थान दिया है।[5]

संकट कालीन स्थिति एवं सुखमय जीवन व्यतीत करने क लिए ही मनुष्य अर्थ एकत्र करता है। आपत्तिकाल में मनुष्य संकटों से कैसे पार होता है? साहस, धैर्य और अर्थ के बल पर ही संकटों से पार हो सकता है। अर्थ को मनुष्य विपत्ति से बचने के लिए और परिवार की रक्षा के लिए ही एकत्र करता है। उनमें भी सर्वप्रथम आत्मरक्षा आवश्यक है, क्योंकि अपनी रक्षा के पश्चात् ही आश्रितों की रक्षा हो सकती है। इस पर मनु ने अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये हैं–

''आपत्ति के लिये धन की रक्षा करनी चाहिये, धन से स्त्री, पुत्रादि की रक्षा करे और धन एवं पुत्रादि से अपनी रक्षा करे।''

इस प्रकार अपनी और अन्य आश्रित जनों की रक्षा के लिए अर्थ को एकत्रित किया जाता है। जगत के व्यवहार को चलाने के लिए अर्थ की अत्यन्त आवश्यकता है। अर्थ की सभी युगों में आवश्यकता रही और रहेगी। आधुनिक युग में अर्थ के बिना मनुष्य एक छोटा से छोटा कार्य भी नहीं कर सकता है। अर्थ ही वर्तमान समय में सबसे बड़ा साधन, गुणों की खान और सफलता की कुंजी है। बिना अर्थ के मनुष्य संसार का सुख नहीं पा सकता है, व्यवहार नहीं चला सकता है। संसार के सभी गुण कांचन(अर्थ) में समाहित हैं। अर्थवान् अर्थ से इस संसार में क्या नहीं कर सकता? इसलिए मनुष्य जगत् के व्यवहार का चलाने के लिए और अपनी कामनाओं की पूर्ति के लिए ही अर्थ का संचय करता है। अच्छे उपायों द्वारा अच्छी जीविका का चयन मनुष्य कब कर सकता है? जब उसने अच्छी विद्या ग्रहण की होगी या अच्छे बुद्धि सम्पन्न लोगों की संगत की होगी।[6]

REFERENCES

1. *मनुस्मृति 4 अध्याय 5 श्लोक*
2. *मनुस्मृति, 4/3*
3. *मनुस्मृति, 7/99*
4. *मनुस्मृति, 7/106*
5. *मनुस्मृति, 4/20*
6. *मनुस्मृति, 7/213*